2 मार्च 2008, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

जहाँ विवेक है, वहाँ आनन्द है, निर्माण है और जहाँ अविवेक है, वहाँ कलह है, विनाश है। ह्न सत्य की खोज, पृष्ठ-199

वर्ष : 30, अंक : 23 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मार्च (प्रथम), 2008 प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय में शास्त्री अंतिमवर्ष के छात्रों का
विदाई एवं दीक्षान्त समारोह सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 24 फरवरी, 08 को श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के शास्त्री द्वितीय वर्ष के छात्रों द्वारा शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों को भावभीनी विदाई दी गई।

इस प्रसंग पर त्रिमूर्ति जिनमंदिर में प्रात: सम्मेद शिखर विधान का आयोजन किया गया। पूजन-विधान के समस्त कार्यक्रम शास्त्री द्वितीय वर्ष के छात्र अंकित जैन एवं संदीप पाटील के निर्देशन में समस्त महाविद्यालय परिवार के सहयोग से सम्पन्न हुये। विधानोपरान्त दो सत्रों में विदाई सभा का आयोजन किया गया।

सभा की अध्यक्षता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने की। मुख्य अतिथि के रूप में पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री, श्री दिलीपजी शाह, श्री रजनीभाई दोशी हिम्मतनगर आदि महानुभावों ने छात्रों के हितार्थ मार्मिक उद्बोधन दिये।

इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री सुशीलकुमारजी गोदीका के अतिरिक्त श्री जमनालालजी सेठी, श्री कैलाशचंदजी सेठी एवं श्री प्रकाशचंदजी सेठी भी मंचासीन थे।

समारोह में शास्त्री तृतीय वर्ष के विद्यार्थियों में अनेकान्त भारिल्ल, संतोष जैन, मिलिंद जैन, विनय जैन, उमेश जैन, सौरभ जैन, अभिजीत अलगौंडर, वीरचंद जैन, अंकित जैन ,अचल जैन, प्रतीक जैन, नितिन जैन, कीर्तिकुमार पाटील, विवेक जैन, चेतन जैन, प्रसन्न जैन एवं कु. परिणति पाटील ने महाविद्यालय में व्यतीत किये हुए पाँच वर्षों के अनुभवों, अनुजों को मार्गदर्शन एवं अपनी आगामी योजनाओं के संबंध में विचार व्यक्त करते हुए महाविद्यालय परिवार एवं गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की। सभी ने तत्त्वप्रचार-प्रसार हेतु सदैव सहयोग देने की उत्कृष्ट भावना को अभिव्यक्त किया।

सभा के दौरान शास्त्री तृतीय वर्ष से सचिन जैन एवं शास्त्री द्वितीय वर्ष से संदीप जैन तथा कु.स्वाति जैन ने विदाई गीत प्रस्तुत किया।

शास्त्री अन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों को श्रीमती कमलाजी भारिल्ल एवं श्रीमती गुणमालाजी भारिल्ल द्वारा तिलक लगाकर एवं द्वितीय वर्ष के छात्रों द्वारा माल्यार्पण, श्रीफल एवं स्मृति चिह्न भेंटकर सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के करकमलों से शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों को 'सिद्धान्तशास्त्री' की उपाधि प्रदान की गई।

कार्यक्रम के अन्त में महाविद्यालय के विशिष्ट क्षेत्रों में अपना योगदान प्रदान करनेवाले विद्यार्थियों में **आदर्श छात्र** के रूप में उपाध्याय वरिष्ठ के छात्र रजित जैन भिण्ड, **साहित्यिक क्षेत्र** में शास्त्री द्वितीय वर्ष से विशेष जैन बड़ामलहरा, **चिकित्सकीय योगदान** के लिये शास्त्री अंतिम वर्ष से रविन्द्र महाजन, **विशेष अध्ययन-उन्नति** के लिये शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्र जे.जयकुमार को पुरस्कृत किया गया।

वर्ष 2007-08 की **सर्वश्रेष्ठ कक्षा** के रूप में शास्त्री द्वितीय वर्ष को चल वैजयंती प्रदानकर सम्मानित किया गया।

महाविद्यालय के सभी विद्यार्थियों को अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचन्द भारिल्ल चैरिटेबल ट्रस्ट की ओर से '**चलते-फिरते सिद्धों से गुरु**' एवं श्री गम्भीरमलजी सोनी फुलेरावालों की ओर से '**चैतन्य वाटिका**' नामक पुस्तकें वितरित की गई।

आभार प्रदर्शन तपिश जैन उदयपुर ने किया।

सम्पादकीय – 1

चलते–फिरते सिद्धों से गुरु

ह्न पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

निःसंदेह सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड कभी दिगम्बर जैन संस्कृति और मूर्तिकला का केन्द्र रहा होगा; क्योंकि आज भी वहाँ के चप्पे–चप्पे में विशालकाय दिगम्बर जैन मूर्तियाँ खण्डित और अखंडित अवस्था में विद्यमान हैं, तथा उकेरी गई कला कृतियों से सुसज्जित खंडित–अखंडित जिन प्रतिमाओं एवं जिन मंदिरों के अवशेष मानो पुकार–पुकार कर कह रहे हैं कि 'आत–ताइयों द्वारा हम पर घोर अत्याचार हुए हैं, हमें खण्डित किया गया है।'

प्रमाण के रूप में जमीन की जुताई और खुदाई के रूप में बहुत से अवशेष मिल चुके हैं और बहुत सी मूर्तियाँ और मन्दिर अभी भी भूगर्भ में दबे पड़े हैं, जो यदा–कदा मिलते रहते हैं।

इसी बुन्देलखण्ड में एक ललितपुर नगर है, जो दिगम्बर जैन समाज का गढ़ है। ललितपुर नगर के निकट वहाँ से ३४ किलोमीटर दूर तथा जाखलोन ग्राम से तीन किलोमीटर की दूरी पर देवगढ़ नामक दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र है। जाखलोन ग्राम में भी कभी बहुसंख्य जैनों का निवास स्थान था। अभी भी देवगढ़ की विशालकाय, अनगिनत खण्डित और अखंडित पाषाण प्रतिमायें तथा वहाँ के जिनमंदिर अपना इतिहास कह रहे हैं तथा जिनदेवों के गढ़ के रूप में देवगढ़ नाम को सार्थक कर रहे हैं।

देवगढ़ पहाड़ी प्रदेश पर स्थित सुरम्य, प्राकृतिक सम्पदा और सौन्दर्य से सम्पन्न, मानवीय कोलाहल से दूर एकदम शान्त और एकान्त साधु–संतों के ध्यान व अध्ययन के लिए उपयुक्त स्थान है।

वहाँ विद्यमान वीतराग मुद्रा युक्त मूर्तियों के दर्शनों से श्रद्धावान श्रावकों और साधकों की कर्मनिर्जरा तो होती ही है, आध्यात्मिक चेतना भी जागृत होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थान वहाँ के जैन समाज ने कभी व्रती–ब्रह्मचारियों और घर–परिवार से निवृत्ति लेकर धर्म साधना करनेवालों के लिए ही बनाया होगा, जिसने धीरे–धीरे समय के अनुसार उतार–चढ़ावों को देखते हुए आज यह रूप ले लिया है।

सहज संयोग से वहाँ की वंदना करने के लिए एक मुनिसंघ का शुभागमन हुआ, चातुर्मास का समय निकट था, धर्मसाधना की दृष्टि से स्थान और वातावरण उन्हें अनुकूल लगा। अतः मुनिसंघ ने वहाँ ही चातुर्मास की स्थापना करने का निश्चय कर लिया।

मुनिसंघ के चातुर्मास करने के समाचार सुनकर हर्ष से ओत–प्रोत आसपास के सहस्त्रों श्रावकों का मन मयूर नाच उठा, उस क्षेत्र के सम्पूर्ण जैन समाज में हर्ष छा गया। सभी ने संकल्प किया कि 'हम संघ द्वारा दिए गए तत्त्वोपदेश का भरपूर लाभ लेंगे।' जाखलोन जैन समाज के तो मानो भाग्य ही जाग गये। देवगढ़ के निकट होने से उन्हें साधु संघ से प्रवचन सुनने को तो मिलेंगे ही, आहारदान देने का सौभाग्य भी प्राप्त होगा। उन्होंने सोचा हमारे भाग्य से जब ज्ञानगंगा घर आ ही गई है तो इसमें स्नान कर विषय–कषाय की तपन बुझाकर शीतलता प्राप्त क्यों न करें ?

यद्यपि दिगम्बर जैन मुनि एक स्थान पर अधिक नहीं ठहरते; क्योंकि जिस स्थान पर अधिक ठहरेंगे तो वहाँ के व्यक्तियों से उनके रागात्मक संबंध बन जाने की संभावना हो जाती है, जो मुनि भूमिका में अभीष्ट नहीं है। जिस राग का त्याग करने के लिए उन्होंने घर–कुटुम्ब–परिवार छोड़ा है, वही राग की आग सुलगने लगे ह्न ऐसा मौका ही वे क्यों दें ? अतः वे एकान्त में, निर्जन स्थान में रहना ही पसंद करते हैं; परन्तु इस संदर्भ में आचार्य पद्मनन्दी लिखते हैं कि ह्न 'इस कलिकाल में संहनन की कमजोरी के कारण मुनिराजों को नगर से अति दूर भयंकर वन में निवास करना वर्जित है, इसलिए उन्हें नगर के निकट बने जिनागारों में रहकर ही अपने ध्यानाध्ययन की सिद्धि करना चाहिए। कहा भी है ह्न

सम्प्रत्यत्र कलौकाले, जिनगेहे मुनिः स्थितिः।
धर्मश्च दानमित्येषां, श्रावकाः मूल कारणम्॥

– पद्मनन्दि पंचविंशतिका अध्याय–६, पृ. ८३

''काले कलौ बने वासे वर्जनीयो मुनीश्वरैः।
स्थीयते च जिनागारे ग्रामादिषु विशेषतः॥

– नीतिसार श्लोक–१९

बारिश की ऋतु में भी जीवराशि की प्रचुर उत्पत्ति के कारण अहिंसा व्रत की रक्षार्थ उन्हें एक ही स्थान पर रुकना अनिवार्य हो जाता है। ऐसी स्थिति में वे श्रावकों के सम्पर्क में कम से कम रहने का प्रयत्न करते हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि समाज और श्रावक समस्याओं के पुंज होते हैं। वे सोचते हैं 'सन्तों से हमें हमारी समस्याओं का समाधान अवश्य मिलेगा' इसकारण वे बड़ी आशा लेकर सन्तों के पास पहुँचते हैं और उनके प्रभाव का लाभ लेना चाहते हैं; परन्तु इससे मुनिराजों के समय का दुरुपयोग तो होता ही है, उपयोग भी खराब होता है ह्न यह बात मुनिराज भी भलीभांति समझते हैं, अतः वे श्रावकों से दूर ही रहना चाहते हैं। इसीकारण वे नगर से दूर, नसिया, वसतिका आदि में ठहरते हैं।

यद्यपि वहाँ उपवन में वन जैसा ही वातावरण होने से उन्हें

डांस–मच्छर खाते हैं, पर वे परीषहजयी तो होते ही हैं, साथ में यह भी सोचते हैं कि 'यहाँ डांस–मच्छर तो शरीर को ही खाते हैं, पर नगरों में तो ये मानव माथा खाते हैं, उपयोग खराब करते हैं, अत: इनसे दूर निर्जन स्थान में रहना ही श्रेष्ठ है।'

मुनिराजों के ठहरने का स्थान वही सर्वोत्तम होता है **जो नगर या ग्राम से न अति दूर हो और न अति निकट, ताकि उन्हें आहार हेतु कठिनाई न हो तथा जिज्ञासु जीवों को संघ के सान्निध्य में उपदेश का लाभ लेने में भी कठिनाई न हो।** मातायें, बहिनें और वृद्ध लोग सरलता से पहुँच सकें।[१]

मुनिराज मात्र आहार के निमित्त नगर में आते हैं, उस समय भी सिंहवृत्ति से मौन लेकर आते हैं और नवधा भक्ति से पड़गाहन के बाद निर्दोष विधिपूर्वक खड़े–खड़े आहार लेकर चले जाते हैं।

हाँ, यदा–कदा करुणाबुद्धि से तत्त्वोपदेश देते हैं, उसमें भी कोई लौकिक चर्चा नहीं करते। तत्त्वोपदेश भी अपनी सभी दैनिक चर्या–सामायिक आदि को निर्बाध रूप से यथासमय सम्पन्न करते हुए सुविधानुसार ही करते हैं। मुनिराज श्रावकों के किन्हीं भी आयोजनों में समय पर पहुँचने के लिए श्रावकों से वचनबद्ध नहीं होते।

मुनिसंघ का देवगढ़ में चातुर्मास होने से आसपास के सभी श्रावक आशान्वित हुए कि अब हमें चार माह तक मुनिराजों के दर्शन तो मिलेंगे ही, धर्मोपदेश का लाभ भी प्राप्त होगा। एक बुजुर्ग व्यक्ति ने सलाह दी कि 'हमें संघ से यह प्रार्थना करनी चाहिए कि वे हमें देव–गुरु–शास्त्र का स्वरूप समझायें, क्योंकि इन विषयों के विषय में समाज अधिक भ्रमित है। जैन होने के कारण समाज सदाचारी तो है, विद्वान भी सदा अष्ट मूलगुणों के धारण करने, सात व्यसनों के त्याग करने, रात्रि भोजन न करने के लाभों से परिचित कराते ही रहते हैं, देवदर्शन–पूजन करने की प्रेरणा भी मिलती रहती है, परन्तु तत्त्वोपदेश मिलना संभव नहीं होता।'

यह सब सोचकर समाज ने मुनिसंघ से तत्त्वोपदेश और देव–गुरु के स्वरूप को समझाने की प्रार्थना की, क्योंकि ये ही सम्यग्दर्शन के हेतु हैं, मोक्षमार्ग के साधन हैं तथा समाज इनसे अनभिज्ञ भी है।

आचार्यश्री ने श्रावकों की जिज्ञासा को ध्यान में रखते हुए सर्वप्रथम वीतरागी सर्वज्ञ देव एवं निर्ग्रन्थ गुरु के स्वरूप को समझाने का आश्वासन दिया। सभी उपस्थित लोग मुनि संघ की वन्दना कर हर्षित होते हुए अपने–अपने घर चले गये।

ह्न ह्न ह्न

अगले दिन प्रवचन शृंखला का शुभारंभ करते हुए आचार्यश्री ने स्वयं अपने मंगल प्रवचन के साथ चातुर्मास की विधिवत् स्थापना की तथा प्रथम दिन देव–शास्त्र–गुरु के स्वरूप और साधना पर प्रवचन देते हुए कहा ह्न ''तार्किक शिरोमणि स्वामी समन्तभद्राचार्य ने अपने देवागम स्तोत्र में तीर्थंकर भगवान को भी बिना समझे नमस्कार नहीं किया। अत: हम सभी को भी देव–शास्त्र–गुरु की पूजा करने के पहले उनके स्वरूप को भलीभांति समझना होगा। देव–शास्त्र–गुरु के स्वरूप की यथार्थ पहिचान के बिना मात्र लौकिक कामना की पूर्ति की भावना से पूजा करने से गृहीत मिथ्यात्व जैसा महा पाप लगता है; क्योंकि उनको जाने बिना हम उन्हें पतित पावन, अधम–उधारक, सुख का कर्ता और दु:ख का हर्ता तथा अपनी सभी लौकिक–अलौकिक–पारलौकिक कामनाओं की पूर्ति करनेवाला मान लेते हैं, जबकि वे वीतरागी हैं, पर के कर्तृत्व की भावना से बहुत ऊपर उठ चुके हैं। इसकारण वे किसी का न भला करते हैं और न बुरा करते हैं।

जीवों का भला–बुरा होना और उनकी लौकिक कामनाओं की पूर्ति होना न होना तो उनके पुण्य–पाप कर्म के आधीन है।

देखो, वीतराग देव को पर के सुख–दु:ख का दाता, भले–बुरे का कर्ता मानने से अरहंत देव का अवर्णवाद भी होता है, जो दर्शन मोहनीय के बंध का कारण है। अत: पूजा करने के पहले पूज्य, पूजा, पूजक और पूजा के फल को भलीभांति समझना होगा।''

आचार्यश्री ने आगे कहा ह्न ''देखो, पूजा त्रिमुखी प्रक्रिया है। त्रिमुखी प्रक्रिया का अर्थ है। पूजा में तीन अंग मुख्य है। १. पूज्य देव–शास्त्र–गुरु, जिनकी पूजा की जाती है, २. पूजक, जो पूजा करते हैं, ३. पूजा की क्रिया/प्रक्रिया। इन तीनों के विषय में प्रथम तो यह जानना जरूरी है कि पूज्य कौन हैं? दूसरे, पूजा की विधि क्या है ? पूजा का उद्देश्य क्या है ? पूजन की सामग्री कैसी हो ? पूजा का फल क्या है ? आदि।

तीसरे, पूजक किस प्रयोजन से पूजा करते हैं, पूजा में जो कुछ वे बोलते हैं, उसका भावार्थ समझते हैं या नहीं ? देव–शास्त्र–गुरु के सामने खड़े होकर पूजा के फल में वे क्या तो चाहते हैं? और उन्हें वस्तुत: किस फल की अपेक्षा रखना चाहिए?

यदि इन सब प्रश्नों के उत्तर उन्हें आगम और युक्ति के अनुकूल मिलते हैं, तब तो उनकी पूजा सही है, अन्यथा कोरा अरण्य रोदन है। निर्जनवन में कोई रुदन करें, तो उसे वहाँ कौन सुनने वाला है? इसीतरह वीतरागी देव–शास्त्र–गुरु के सामने कुछ भी कहो, उन पर क्या प्रतिक्रिया होने वाली है? कुछ भी नहीं। तथा बिना समझे वे पूजक पुण्य के बजाय पापार्जन ही करते हैं। बस आज इतना ही।''

ॐ नम: ! ●

मुक्त विद्यापीठ के छात्रों हेतु...

(1) सभी छात्रों को उनके नामांकन नम्बर एवं टेस्ट पेपर भेजे जा चुके हैं। जिन छात्रों को न मिले हों वे धर्मेन्द्रजी से अथवा पीयूषजी से सम्पर्क करें।

(2) टेस्ट पेपर 10 मार्च तक भरकर जयपुर भिजवावें ताकि उन्हें पेपर जाँचकर वापस भेजे जा सकें।

(3) द्विवर्षीय उपाध्याय पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में ह्न

(A) वीतराग विज्ञान भाग ह्न 1 (B) वीतराग विज्ञान भाग ह्न 2 (C) वीतराग विज्ञान भाग ह्न 3 (D) छहढाला एवं सत्य की खोज इसप्रकार ये चार पेपर होंगे। जिन छात्रों के पास इन पेपरों की पाठ्यपुस्तकें न हों वे साहित्य बिक्री विभाग, जयपुर को पत्र लिखकर मंगा लेवें।

(4) फाईनल एग्ज़ाम 25 अप्रेल से होंगे अत: पाठ्यक्रम एवं मॉडल टेस्ट पेपर के अनुसार अपनी तैयारी चालू रखें। इसका प्रारूप और अन्य जानकारी निम्नानुसार है ह्न

पेपर का प्रारूप ह्न

प्रत्येक विषय के एक–एक इसप्रकार कुल 4 पेपर होंगे। प्रत्येक पेपर 90 नम्बर का होगा, जिसका विवरण निम्नानुसार है ह्न

5 परिभाषात्मक प्रश्न (प्रत्येक 3 अंक)	ह्न 15
3 भेद–प्रभेदात्मक प्रश्न (प्रत्येक 2 अंक)	ह्न 6
10 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न (प्रत्येक 2 अंक)	ह्न 20
5 लघुत्तरात्मक प्रश्न (प्रत्येक 4 अंक)	ह्न 20
3 दीर्घोत्तरात्मक प्रश्न (प्रत्येक 6 अंक)	ह्न 18
1 निबंधात्मक प्रश्न (11 अंक)	ह्न 11

इसके अतिरिक्त 20 प्रतिशत अंक टेस्ट पेपर के जुड़ेंगे। इसप्रकार कुल 100 अंकों का एक पेपर होगा।

वार्षिक परीक्षा हेतु निर्देश ह्न

(1) पाठ्यपुस्तक में आये हुये पद्यात्मक पाठों में से छन्दपूर्ति व छन्दों का सामान्यार्थ पूछा जायेगा।

(2) पाठ्यपुस्तकों में आये हुये महापुरुषों, आचार्यों का जीवन–परिचय भी पूछा जायेगा।

(3) छहढाला के भेद–संग्रह, लक्षण–संग्रह और अन्तर–प्रदर्शन वाले प्रकरण को अवश्य पढ़ें।

(4) छहढाला के पद्यों का सामान्य अर्थ ही पूछा जायेगा, टीका या भावार्थ नहीं।

(5) सत्य की खोज में से पात्रों का चरित्र–चित्रण, उपन्यास की शिक्षा, उद्देश्य, मूलभाव, सूक्तियों व उनके सामान्यार्थ इत्यादि से संबंधित प्रश्न रहेंगे।

फैडरेशन की नवीन शाखा का गठन

१. वाडेगाव (महा.) : यहाँ दिनांक 30 जनवरी, 08 को श्री सुरेशकुमारजी बेलोकर विहीगाव की अध्यक्षता में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन की वाडेगाव शाखा का गठन किया गया।

इस अवसर पर आयोजित सभा की शुरुआत णमोकार मंत्र के माध्यम से की गई। सभा में श्री सुरेशकुमारजी बेलोकर ने फैडरेशन के बारे में बताते हुए श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, वीतराग–विज्ञान एवं जैन पथ प्रदर्शक, आध्यात्मिक शिक्षण शिविरों के आयोजन और संचालन, पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट, विशिष्ट पर्वों पर विद्वानों की व्यवस्था एवं ग्रुप शिविरों के आयोजन से सम्बंधित जानकारी समाज को प्रदान की।

यहाँ सर्व सम्मति से निम्नानुसार कार्यकारिणी का गठन हुआ ह्न **अध्यक्ष ह्न** श्री सुरेश रघुनाथजी क्षीरसागर, **उपाध्यक्ष ह्न** सौ. अर्चना गजकुमार मंगलकर, **सचिव ह्न** श्री प्रभाकर प्रहलाद बेलोकर, **सदस्यगण ह्न** श्री अतुल मधुकर मंगलकर, श्री सूरज देवलाल मंगलकर, श्री सुनील महादेव मंगलकर, श्री अभयकुमार जिनदास बेलोकर, श्री धनंजय विजय मंगलकर, सौ. वंदना अंतिदास बेलोकर, सौ. रेखा सुरेश क्षीरसागर, सौ. सुनंदाबाई राजाभाऊ मंगलकर, श्री वैभव विजय बेलोकर, एवं श्री संजय शांतिनाथ पांडवकर।

अंत में फैडरेशन के राष्ट्रीय गीत 'मैं ज्ञानानंद स्वभावी हूँ' के गानपूर्वक सभा का समापन किया गया।

वार्षिकोत्सव सानन्द सम्पन्न

अलवर (राज.) : यहाँ श्री रत्नत्रय दिगम्बर जिनमंदिर, चेतन एन्क्लेव में दिनांक 17 से 19 फरवरी,08 तक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की प्रथम वर्षगाँठ पर रत्नत्रय मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

दिनांक 17 फरवरी को प्रात: श्री प्रदीपजी अशोकजी जैन परिवार धामपुरवालों के करकमलों से ध्वजारोहण किया गया। मुख्य कलश स्थापनकर्त्ता श्री सुमतप्रसाद पवनकुमार जैन अलवर थे।

विधि–विधान के समस्त कार्य पण्डित प्रेमचन्दजी शास्त्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुये।

इस अवसर पर पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के तीनों समय समयसार पर सारगर्भित प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित किशनचन्दजी जैन एवं पण्डित अरुणजी शास्त्री के सान्निध्य का लाभ मिला।

सायंकाल अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के सदस्यों द्वारा जिनेन्द्र भक्ति एवं प्रवचनोपरान्त माता–अष्ट देवियों की चर्चा, इन्द्रसभा एवं पाठशाला के बालकों द्वारा ज्ञानवर्धक प्रस्तुति दी गई।

सभी कार्यक्रम पण्डित अजितजी शास्त्री, अलवर के निर्देशन एवं संचालन में सम्पन्न हुये। **ह्न रतनलाल जैन**

विदाई समारोह के अवसर पर श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय एवं स्मारक परिवार को समर्पित संतोष जैन शास्त्री बक्स्वाहा द्वारा प्रस्तुत कविता ह्न

चंद संस्कार ऐसे थे, जो बचपन में मैंने पाये ।
ये फल उनका ही था शायद, जो स्मारक में ले आये।।
न जाने वो अचम्भा था, या थी आवाज जादुई।
अरे पावन धरा है ये, जहाँ वो खींचकर लाई ।।
आओ यारों सुनाता हूँ, कथा इस पावन दुनिया की ।
यहाँ के दिन हैं खुशियोंमय, यहाँ की रात मुस्काई ।।
आभारी हूँ उस क्षण का, जो क्षण मुझको यहाँ लाया ।
कहूँ कैसे किन शब्दों में, जो कुछ मैंने यहाँ पाया ?
जगत गुरुओं ने हाँ हमको, गधा–मुर्गा बनाया।
मगर गुरुदेव ऐसे थे, 'बधा भगवान' बतलाया ।।
अरे आया था मैं खाली, भर गई है मेरी झोली ।
भवबंधन काट देना तुम, यही जिनवाणी माँ बोली ।।
अरे ये गोद है ऐसी, जहाँ संस्कार पलते हैं ।
करे भव पार जो हमको, वो जिनमत बोल मिलते हैं ।।
अरे इस भूमि को छूकर, करता हूँ मैं वंदन ।
यहाँ के शब्द पावन हैं, यहाँ की धूल है चंदन ।।
अरे अद्भुत अतिशय है, यहाँ की जड़ दीवारों का।
यहाँ का ज्ञान पारस है, करे जो लोह को कुन्दन ।।
अरे इन दिव्य गुरुओं ने, ज्ञान की धार बरसाई ।
मेरा ही पात्र छोटा था, चन्द बूँदे ही मिल पाई ।।
जी भर के तुम नहा लेना, मित्रों ये ज्ञानगंगा है ।
बड़ा वात्सल्य है इनमें, यही अध्यात्म यमुना है ।।
यह अमृतमयी नदियाँ, बड़ी मुश्किल से मिल पाये ।
मित्रों तुम डूब ही जाना, धार ये न निकल जाये ।।
बेच दूँ खुद को भी तो मैं, चुका न पाऊँगा ये ऋण ।
जो पाया यहाँ पर है, उसे बाँटूगा है यह प्रण ।।
अरे आभारी हूँ उनका, जिन्होंने दी है ये खुशियाँ ।
काश ! ये पल ही थम जाये, जो खुशियों से भरा उनने ।।
अरे तुम तोड़ दो बन्धन, मुक्त आकाश तेरा घर ।
रोक न पायेगा कोई, मगर पुरुषार्थ पूरा कर ।।
हूँ गुरुओं का आभारी, और वात्सल्य अनुजों को ।
करूँ आतम की साधना, शीघ्र मुक्ति को पा जाऊँ ।।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

8 से 10 मार्च	जयपुर	विश्वविद्यालय संगोष्ठी
1 से 8 अप्रैल	कोलकाता	तीनलोक मण्डल विधान

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित

42 वाँ शिक्षण–प्रशिक्षण शिविर, मंगलायतन में

आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी की प्रेरणा से निर्मित पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित बयालीसवाँ श्री वीतराग–विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण–प्रशिक्षण शिविर इस वर्ष दिनांक 18 मई से 04 जून, 2008 तक मंगलायतन (अलीगढ़–उ.प्र.) में होना निश्चित हुआ है। शिविर के माध्यम से अध्ययन करानेवाले बन्धुओं (अध्यापकों) एवं मुमुक्षु भाई–बहिनों को शिक्षण–विधि में प्रशिक्षित किया जायेगा।

इस अवसर पर इस शिविर में आपको डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित कैलाशचन्दजी बुलन्दशहर, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा जयपुर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित राकेशजी शास्त्री अलीगढ़, पण्डित अशोकजी लुहाड़िया अलीगढ़, पण्डित संजयजी शास्त्री अलीगढ़, आदि अनेक विद्वानों के प्रवचनों/कक्षाओं का लाभ मिलेगा।

उक्त अवसर पर समागत विद्वानों के प्रवचनों का लाभ तो प्राप्त होगा ही, साथ में बालकों, प्रौढों और महिलाओं के लिए शिक्षण–कक्षाओं की भी व्यवस्था रहेगी। प्रशिक्षण शिविर में पहुँचने वाले भाई–बहनों को इसकी पूर्व सूचना निम्नांकित पते पर अवश्य भेज देवें, ताकि उनके ठहरने एवं भोजनादि की समुचित व्यवस्था की जा सके।

ह्न महामंत्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट,
ए–4, बापूनगर, जयपुर–15 (राज.)
फोन : (0141) 2707458, 2705581

अलीगढ़ का पता ह्न
श्री अशोकजी लुहाड़िया निर्देशक, तीर्थधाम मंगलायतन
अलीगढ़–आगरा मार्ग, निकट हनुमान चौकी,
डी. पी. एस. के सामने, सासनी, जिला–महामायानगर (उ.प्र.)
फोन : 0571–2223391, मोबा. : 09897890983

प्रेरक पत्र

सिलचर से श्री सुरेशचन्दजी जैन लिखते हैं कि ह्न

डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया द्वारा लिखी गई पुस्तक '**विचार के पत्र विकार के नाम**' पढ़ने का मन हुआ। लेखिका ने पत्रों के माध्यम से जैनधर्म का सार बतलाया है। पूरी पुस्तक तीन घन्टे में पढ़ ली, फिर भी मन को तसल्ली नहीं हुई। मन बारम्बार पढ़ने को कहता है। वास्तव में मन के सारे विकारों का समाधान विचार के द्वारा ही संभव है।

तत्त्वचर्चा

छहढाला का सार 23

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे .....)

जब यह आत्मानुभवन की प्रक्रिया चलती है; तब ऐसे विकल्प नहीं उठते कि ज्ञान गुण है, आत्मा गुणी है; आत्मा ज्ञाता है, जानना ज्ञान है और जो जानने में आ रहा है, वह आत्मा ज्ञेय है।

तात्पर्य यह है कि उक्त स्वरूपाचरण की अवस्था में गुण-गुणी और ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय संबंधी विकल्प खड़े नहीं होते।

जिसप्रकार ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय संबंधी विकल्प खड़े नहीं होते; उसीप्रकार ध्यान-ध्याता-ध्येयसंबंधी विकल्प भी खड़े नहीं होते; वचनसंबंधी विकल्प खड़े नहीं होते। कर्ता-कर्म-क्रिया के सन्दर्भ में भी यही स्थिति है; क्योंकि चिदेश आत्मा कर्त्ता है, चिद्भाव (ज्ञान-दर्शन) कर्म है और चेतना (जानना-देखना) क्रिया है। एक द्रव्य की मर्यादा के भीतर होने से तीनों एक ही हैं, एक आत्मा ही हैं। शुद्धोपयोग अर्थात् स्वरूपाचरण की दशा में तीनों अभिन्न ही हैं; इसलिये अखिन्न हैं; किसी प्रकार की खिन्नता शुद्धोपयोग के समय नहीं होती।

शुद्धोपयोग में दर्शन-ज्ञान-चारित्र की ऐसी निश्चल दशा प्रगट हो गई है कि जिसमें ये दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीन होकर भी एकरूप में ही शोभायमान हो रहे हैं।

अनुभूति के काल में प्रमाण-नय-निक्षेप का उदय भी नहीं होता। तात्पर्य यह है कि प्रमाण-नय-निक्षेप संबंधी विकल्प भी खड़े नहीं होते। उसमें तो ऐसा भासित होता है कि मैं तो सदा ही ज्ञान, दर्शन, सुख और बलमय हूँ; इनके अतिरिक्त कोई अन्य भाव मुझमें नहीं है।

मैं ही साध्य हूँ और मैं ही साधक हूँ तथा कर्म और कर्मफलों से मैं सदा ही अबाधक हूँ। तात्पर्य यह है कि मुझमें साध्य-साधक का भी भेद नहीं है, विकल्प नहीं है और कर्मचेतना और कर्मफलचेतना की बाधा नहीं है; क्योंकि मैं तो ज्ञानचेतनारूप हूँ। मैं चैतन्य का पिण्ड हूँ, प्रचण्ड हूँ, अखण्ड हूँ और गुणों का पिटारा हूँ तथा सभी प्रकार के विकारी भावों से रहित हूँ।

देशनालब्धि में गुरुमुख से सुनकर किये गये निर्णय के अनुसार पहले विकल्प की भूमिका में ऐसे विकल्प चलते थे कि मैं ही ज्ञान हूँ, मैं ही ज्ञाता हूँ, मैं ही ज्ञेय हूँ; मैं ही ध्यान हूँ, मैं ही ध्याता हूँ और मैं ही ध्येय हूँ; मैं ही कर्त्ता हूँ, मैं ही कर्म हूँ, मैं ही करण हूँ, मैं ही सम्प्रदान हूँ, मैं ही अपादान हूँ और मैं ही अधिकरण हूँ; मैं प्रमाण का विषय हूँ या शुद्धनय का विषय हूँ, मैं प्रत्यक्ष हूँ या परोक्ष हूँ; किन्तु अनुभव के काल में उक्त सभी विकल्पजाल समाप्त हो जाता है और एक अचल, अखण्ड, अभेद, निर्विकल्प भगवान आत्मा ही एकमात्र मैं हूँ ह्न इसप्रकार का विकल्पों से रहित अनुभव (ज्ञान) रह जाता है। इस निर्विकल्पज्ञान के ज्ञेयभूत भगवान आत्मा में 'यह मैं हूँ' ह्न ऐसा अपनापन बना रहता है और ध्यान का ध्येय भी वही अभेद-अखण्ड आत्मा बना रहता है। ह्न इसी का नाम अनुभव है, शुद्धोपयोग है और स्वरूपाचरण है।

यहाँ एक प्रश्न यह हो सकता है कि जब यह आत्मा शुद्धोपयोग में रहेगा; तब वाणी से स्तुति करना और काया से नमस्कार (वंदना) करना आदि छह आवश्यकों का पालन कैसे होगा ?

उनका पालन तो आवश्यक ही है; क्योंकि उनका नाम ही आवश्यक है और वे छह आवश्यक मुनियों के मूलगुणों में हैं। मूलगुण का अर्थ भी यही है कि मुनियों के जीवन में ये गुण होते ही हैं, होना ही चाहिये।

उनसे कहते हैं कि कार्य तीन प्रकार के होते हैं ह्न १. आवश्यक, २. परमावश्यक और ३. अनावश्यक। इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य परमावश्यक कार्य है, जिसे करने के लिये आवश्यक कार्यों को भी छोड़ा जा सकता है; क्योंकि मुनिधर्म में जो कुछ किया जाता है, वह सब एकमात्र इसी की प्राप्ति के लिये ही किया जाता है।

जब यह परमावश्यक कार्य सफल हो जाता है, अरहंत दशा प्राप्त हो जाती है तो फिर आवश्यक कार्य भी अनावश्यक हो जाते हैं। अरहंत अवस्था में तो ये आवश्यक रहते ही नहीं है; किन्तु शुद्धोपयोग के काल में भी नहीं रहते। जब मुनिराज बाहुबली ध्यान में एक वर्ष तक खड़े रहे, तब वाणी से स्तुति करना, काया से वंदना करना आदि आवश्यक कहाँ किये जा सके ? तो क्या वे उन आवश्यक कार्यों के नहीं करने से सच्चे मुनि नहीं रहे ? हाँ यदि वे उन आवश्यक कार्यों को छोड़कर अनावश्यक कार्यों में उलझ जाते तो अवश्य ही उनका मुनिधर्म संकट में पड़ जाता।

गृहस्थ अवस्था में भी जब हम सामायिक कर रहे होते हैं; तब यदि कोई अतिथि या मुनिराज आ जावें तो क्या सामायिक छोड़कर उनकी वंदना आदि में प्रवृत्ति करते हैं, करना चाहिये क्या ?

मुनिराजों को तो दो कार्य ही करने योग्य हैं। प्रथम आत्मध्यानरूप परमावश्यक कार्य और दूसरा छह आवश्यकों के पालनरूप शुभभाव।

रत्नकरण्डश्रावकाचार में आचार्य समन्तभद्र लिखते हैं ह्न

ज्ञानध्यानतपोरक्तः तपस्वी स प्रशस्यते।

ज्ञान माने स्वाध्याय और ध्यानरूप तप में लीन तपस्वी ही प्रशंसा के योग्य हैं। ऐसा भी अर्थ हो सकता है कि ज्ञान, ध्यान और

तप में लीन तपस्वी ही प्रशंसा योग्य हैं; किन्तु ज्ञान अर्थात् स्वाध्याय और ध्यान ह्न ये दोनों तप ही तो हैं; अत: यही ठीक है कि स्वाध्याय और ध्यान नामक तप में रक्त तपस्वी ही प्रशंसा योग्य हैं।

आचार्य समन्तभद्र के उक्त कथन में ध्यानरूप शुद्धोपयोग और अध्ययन–अध्यापनरूप शुभोपयोग पर ही विशेष बल दिया गया है।

यह तो आप जानते ही हैं कि छह आवश्यकों में श्रुतिरति अर्थात् स्वाध्याय नामक तप को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

इसप्रकार मुनिराजों के लिये तो स्वाध्यायरूप आवश्यक और ध्यानरूप परमावश्यक ह्न इन दो पर ही अधिक वजन है।

पर आज तो स्थिति यह है कि मुनि–अवस्था में जो कार्य करनेयोग्य भी नहीं है; उन अनावश्यक कार्यों से ही उन्हें फुर्सत नहीं है; तब आवश्यक और परमावश्यक कार्य कब किये जायें ? जो भी हो, पर वस्तुस्थिति तो जो है, सो है; उसमें क्या किया जा सकता है ?

यद्यपि शुभभाव भी मुनिराजों के जीवन में होते हैं, हो भी सकते हैं; पर उनके जीवन में उक्त छह आवश्यकरूप शुभभाव ही हो सकते हैं। मन्दिर बनवाने आदि के आरंभजनित भाव भी यद्यपि शुभभाव हैं; पर ये शुभभाव गृहस्थ के तो हो सकते हैं, पर मुनिराजों के नहीं। मुनिराजों के लिये ये कार्य अनावश्यक ही हैं।

जब वे इसप्रकार के आरंभजनित कार्यों की अनुमोदना भी नहीं कर सकते तो फिर करना–कराना तो बहुत दूर की बात है।

इसके बाद शुद्धोपयोगरूप स्वरूपाचरण चारित्र की इस दशा का फल बताते हुये कविवर दौलतरामजी लिखते हैं ह्न

यों चिन्त्य निज में थिर भये, तिन अकथ जो आनन्द लह्यौ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यौ।।
तब ही शुकल ध्यानाग्नि करि, चउ घाति विधि कानन दह्यौ।
सब लख्यौ केवलज्ञान करि, भविलोक कों शिवमग कह्यौ।।

इसप्रकार का चिन्तन करके जो जीव अपने में स्थिर हो गये; उन्होंने जिसप्रकार का आनन्द लिया; उसका कथन करना अशक्य है; क्योंकि इसप्रकार का आनन्द इन्द्र, नागेन्द्र, नरेन्द्र (चक्रवर्ती) और अहमिन्द्रों को भी प्राप्त नहीं है।

यह क्षपकश्रेणी की दशा का वर्णन है; क्योंकि आगे की पंक्तियों में लिखा है कि उसी समय शुक्लध्यानरूपी अग्नि के द्वारा चार घातियाकर्मरूपी जंगल को जला दिया, उसी समय केवलज्ञान हो गया और केवलज्ञान के द्वारा सबकुछ देख लिया गया, जान लिया गया। उसके बाद भव्यजीवों को मुक्तिमार्ग का उपदेश दिया।

इसप्रकार हम देखते हैं कि यह ७वें गुणस्थान से १३वें गुणस्थान तक का विवेचन है; क्योंकि क्षपक श्रेणी का आरोहण ७वें गुणस्थान में होता है और दिव्यध्वनि १३वें गुणस्थान में खिरती है।

यह शुद्धोपयोगरूप स्वरूपाचरण चारित्र का विवेचन है; जिसके फल में चार घातियाँ कर्मों का अभाव होकर अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य से युक्त अरहंत अवस्था प्राप्त होती है।

यहाँ एक प्रश्न संभव है कि इन्द्र, अहमिन्द्र और चक्रवर्ती भी तो सम्यग्दृष्टी होते हैं; उन्हें भी अनुभवजन्य अतीन्द्रिय सुख प्राप्त है; अत: यह कहना कि ह्न

यों चिन्त्य निज में थिर भये, तिन अकथ जो आनन्द लह्यौ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यौ।।

कहाँ तक उचित है ?

इसका सीधा सहज उत्तर यह है कि यहाँ सातवें गुणस्थान के ऊपर की बात चल रही है और इन्द्र, नरेन्द्र, अहमिन्द्र चौथे गुणस्थान में होते हैं। सातवें गुणस्थान के ऊपर जैसा व जितना आनन्द प्राप्त है; वैसा और उतना आनन्द चौथे गुणस्थानवाले इन्द्रादिक को नहीं है।

यहाँ कोई कह सकता है कि चक्रवर्ती भी दीक्षा लेकर मुनिराज बन सकते हैं और श्रेणी भी चढ़ सकते हैं; अत: उन्हें भी इसप्रकार का आनन्द नहीं हो सकता ह्न यह कैसे कहा जा सकता है ?

उससे कहते हैं कि जब चक्रवर्ती दीक्षा ले लेंगे, तब वे मुनिराज हो जायेंगे, चक्रवर्ती नहीं रहेंगे; क्योंकि चक्रवर्तित्व छोड़े बिना कोई मुनिराज बन ही नहीं सकता। चक्रवर्ती अवस्था में तो वे चौथे गुणस्थान में ही रहते हैं।

एक अर्थ ऐसा भी किया जा सकता है कि आत्मानुभूति का सुख चक्रवर्ती और इन्द्रादि को प्राप्त भोगों के सुख से अलग जाति का है। कहा भी है कि ह्न

चक्रवर्ती की सम्पदा अर इन्द्र सारिखे भोग।
काकबीट सम गिनत हैं सम्यग्दृष्टि लोग।।

तात्पर्य यह है कि सम्यग्दृष्टि आत्मानुभवी लोगों की दृष्टि में चक्रवर्ती की सम्पत्ति और इन्द्रों के भोगों की कोई कीमत नहीं है।

सीधासादा भाव यह है कि सन्तों ने जो, जैसा और जितना सुख शुद्धोपयोग के काल में पाया है; वह, वैसा और उतना सुख इन्द्रों और चक्रवर्तियों को भोगों के भोगने से प्राप्त नहीं होता।

उक्त छन्द की तीसरी और चौथी पंक्ति में संकेत दिया है कि सबसे पहले वीतरागता प्राप्त की, फिर केवलज्ञान प्राप्त किया और अन्त में भव्यजीवों को मुक्तिमार्ग का उपदेश दिया। इसका सीधा सादा अर्थ यह है कि वे क्रमश: वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी बने। **(क्रमश:)**

2 मार्च 2008, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

वैराग्य समाचार

1. पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के संस्थापक ट्रस्टी श्री महेन्द्रकुमारजी सेठी जयपुर का दिनांक 27 फरवरी, 08 की रात्री में शांत परिणामों से देहावसान हो गया है। आप 93 वर्ष के थे।

ज्ञातव्य है कि आप गुरुदेवश्री के अनन्य शिष्यों में से थे। आपने अनेक बार सोनगढ जाकर तत्त्वज्ञान का लाभ लिया। श्री टोडरमल स्मारक भवन में चलनेवाले समस्त निर्माण कार्यों में आपकी सदैव सक्रिय भूमिका रही। आपके निधन से न केवल ट्रस्ट; अपितु जैन समाज को अपूरणीय क्षति हुई है।

आपकी निधन पर दिनांक 29 फरवरी को श्री टोडरमल स्मारक भवन में शोक सभा आयोजित कर हार्दिक श्रद्धांजलि दी गई। इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, पण्डित रतनचन्द भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन इत्यादि अनेक विद्वान एवं गणमान्य महानुभाव उपस्थित थे।

2.इन्दौर निवासी देवकुमारसिंहजी कासलीवाल का 88 वर्ष की आयु में दिनांक 16 फरवरी को शान्त परिणामों से देहावसान हो गया।

आप भारवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, राष्ट्रीय दिगम्बर जैन महासमिति, मक्सी पार्श्वनाथ, पावागिरि ऊन, सिद्धवरकूट आदि विविध संस्थाओं, तीर्थ क्षेत्रों के संरक्षक, अध्यक्ष आदि सम्माननीय पदों पर सुशोभित रहे। आपने जीवन पर्यंत विविध धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं व्यावसायिक संस्थाओं के साथ सक्रियता से जुड़ उन्हें अपनी नई ऊँचाईयाँ प्रदान की। आपके चिर वियोग से समाज को अपूरणीय क्षति हुई है।

3. श्रीमती शारदादेवी जैन ध.प. स्व.श्री हरकचन्दजी सोनी (मनोहरथानावालों) का दिनांक 5 फरवरी को देहावसान हो गया है। आपकी स्मृति में आपके सुपुत्र नरेन्द्रकुमार, वीरेन्द्रकुमार, महेन्द्रकुमार एवं जिनेन्द्रकुमार जैन की और से जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को 500/-रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही निर्वाण प्राप्त करें ह्न यही भावना है।

स्लिपडिस्क रोगी ध्यान दें !

सम्पूर्ण उपचार बिना दवा, बिना कसरत, बिना चीरफाड, बिना आराम किए विश्व की नवीनतम तकनीक माइक्रो एक्यूप्रेशर द्वारा शीघ्र उपचार।

डॉ. पीयूष त्रिवेदी (मो.) 09828011871

गोल्ड मेडलिस्ट, बी.ए. एम.एस., एम.डी. (एक्यू.)

डिप्लोमा इन योगा, सुजोक (मास्को) एफ.ए.आर.सी. एस. (लंदन)

मेडिनोवा पोली क्लीनिक, केसरगढ, जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर

समय : सायं 6 बजे से 9 बजे तक, रविवार को प्रात: 8 से 12 बजे तक

नोट-एक्यूप्रेशर सेवा समिति द्वारा 300 से अधिक नि:शुल्क शिविर आयोजित।

अन्य रोग : जोडों का दर्द, गर्दन का दर्द, मोटापा, मायोपैथी, मानस विकृतियां, मधुमेह तथा उच्च रक्तचाप आदि की सफल चिकित्सा।

डाक टिकिट भेजकर नि:शुल्क मँगा लें

प्रसिद्ध विद्वान् एवं रचनाकार अध्यात्म रत्नाकर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल की नवीनतम कृति '**चलते-फिरते सिद्धों से गुरु**'ह्न पृष्ठ 232, मूल्य 16/- एवं '**समाधि और सल्लेखना**' पृष्ठ-48, मूल्य 5/- प्रकाशक ह्न श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् ट्रस्ट, जयपुर का नि:शुल्क वितरण अध्यात्मरत्नाकर पं. रतनचन्द भारिल्ल चैरिटेबल ट्रस्ट, जयपुर की ओर से सन्तों, ब्रह्मचारियों, त्यागियों, विद्वानों, मंदिरों एवं वाचनालयों हेतु किया जा रहा है।

इच्छुक महानुभाव 5/- रुपये के फ्रेश डाक टिकिट निम्न पते पर भेजकर मँगा लेवें। ध्यान रहे यह योजना **18 अप्रैल, 2008** महावीर जयन्ती तक ही है। ह्न अखिल भारतवर्षीय दि. जैन विद्वत्परिषद् ट्रस्ट, 129, जादोन नगर, 'बी', स्टेशन रोड़, दुर्गापुरा, जयपुरह्न18 (राज.)

सम्पादक संघ का अधिवेशन वैशाली में...

अखिल भारतीय जैन पत्र सम्पादक संपादक संघ का प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी की पावन प्रेरणा एवं आशीर्वाद से भगवान महावीर की पावन जन्मभूमि **वासोकुण्ड वैशाली** में 16 से 18 अप्रैल, 08 तक प्रस्तावित है। इस अवसर पर राष्ट्रीय अध्यक्ष का चुनाव, कार्यकारिणी का गठन तथा जैन पत्र-पत्रिकाओं के विकास पर विशेष चर्चा होगी। जैन मीडिया नामक स्मारिका का विमोचन भी इस अवसर पर किया जायेगा। स्मारिका में जैन पत्र-पत्रिकाओं की सूची एवं पत्र सम्पादकों का परिचय तथा अन्य उपयोगी लेख प्रकाशित किये जायेंगे। स्मारिका हेतु रचनाऐं व पत्रकारों का परिचय फोटो सहित सादर आमंत्रित है।

ह्न अखिल बंसल, महामंत्री

129, जादोन नगर-बी, स्टेशन रोड़ दुर्गापुरा, जयपुर

धर्म प्रभावना

सोनागिरी : यहाँ दिनांक व 14 फरवरी 2008 को श्री सोनागिरी ट्रस्ट के वार्षिकोत्सव के प्रसंग पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के ''समयसार का सार'' विषय पर दो व्याख्यान हुए। इस प्रसंग पर पण्डित ज्ञानचंदजी जैन विदिशा और पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुर भी उपस्थित थे।

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, डबल एम.ए.(जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- ४ बापूनगर, जयपुर - ३०२०१५ (राज.)
फोन : (०१४१) २७०५५८१, २७०७४५८
फैक्स : (०१४१) २७०४१२७